जनाब उम्मे कुलसूम का मरसिया (शोक-काव्य)

''मुझ पर वह दुख पड़े जो दिनों पर पड़ते तो काली रातों में बदल जाते।''

यह एक दुखियारी बेटी की शोक–रचना है। वह बेटी जो अपने चहीते चाहने वाले बाप से बिछड़ कर केवल 75/90 दिन (या फिर कुछ महीने) ही जी सकी।

50 साल बाद– इतिहास फिर अपने को दुहराता है। अब उसी दुखियारी बेटी की एक बेटी अपने दुखों की पीड़ाओं को कविता का रूप देती है। अपने भरे पुरे घर को बोझल मन से छोड़ती है और अपने चहीते चाहने वाले बड़े भाई के साथ एक बड़े काफिले में जाती है।.........एक ही दिन में दुख पर दुख उठाती हुई अपना लहलहाता घर उजड़ते देखती है। एक ही दिन में एक एक करके अपने प्यारों का मातम करती है। अपने उस भाई को भी ज़बह होते देखती है। अपना घर लुटते, अपनी और साथी बीबियों की चादरें छिनते देखती है। फिर अपने भाई और दूसरे शहीद होने वाले के बेढके बेसर तन, बेकफन लाशें देखती हुई रस्सी में गला बन्धे बन्दी बने कर्बला छोड़ती है। फिर तो कटे सरों के साथ बन्दी बने कूफे के बाज़ार, कूफे के दरबार, शाम के बाज़ार और दमिश्क़ (शाम) के सजे काले दरबार में और अन्त में एक साल से ज़्यादा शाम के अन्धेरे काले बन्दीघर में यात्नाएँ (ज़ुल्म) झेलती है। अत्याचार के इस बन्दीघर से जब छुटना नसीब होता है और वापस अपनी नगरी मदीने पहुँचती है तो फूट पड़ती है। अपने नाना और अपनी माँ को, भाई को याद करती है, गुहार करती है। अपनी भावनाएँ यूँ कहती हैः–

[यह कोई और नहीं, इतिहास की बड़ी दुखियारी बीबी जनाब उम्मे कुलसूम हैं। हज़रत मुहम्मद (स0) की नवासी, जनाब अमीर और जनाब सैयदा की छोटी लाडली बेटी, इमाम हुसैन (अ0) और जनाब ज़ैनब की बहन.......जनाब सैयदा की पीड़ाओं की वारिस हज़रत अली (अ0) की शैली में यूँ रचना करती हैः–]

1– अपने नाना के नगर (मदीना), अब तू हमें न लें (स्वीकार न कर), हम तो दुख और शोक लेकर पलटें हैं।

2– हाँ, ख़ुदा के रसूल (स0) को हमारी ख़बर दे दे, हमको बाप से बिछड़ने का दुख पहुँचाया गया।

3– यह भी ख़बर कर दे कि हमारे मर्द तफ़ (कर्बला) में मरे पड़े हुए हैं, जिनके (शरीरों पर) सर नहीं हैं, और हमारे बच्चे भी ज़बह कर डाले गये।

4– हमारे नाना को यह भी ख़बर दे दे कि हम पकड़े और बन्दी बनाकर फिराए गये।

5– ऐ ख़ुदा के रसूल (स0) आप का दल तफ़ में खुला (बेढका) पड़ा हुआ है, उनके शरीर से कपड़े लूट लिये गये।

6– दुश्मनों ने हुसैन (अ0) को ज़बह कर डाला है, ऐ ख़ुदा के रसूल (स0), हमसे कोई नरमी, मुरुवत (पास–लिहाज़) न किया गया।

7– कहीं आप अपनी आँखों से हमें ऊँट की गद्दियों पर सवार (बन्दी) देखतीं।

8– ऐ ख़ुदा के रसूल (स0), (सदा) पर्दे की रखवाली करने के बाद (अब) हमें नामहरमों की

आँखों ने (बे खटक) देखा।

9– आप तो हमारी बड़ी रक्षा करते थे, पर इधर आपकी आँखें बन्द हुईं, उधर हम पर दुश्मन टूट पड़े (हमला कर बैठे)।

10– ऐ फ़ातिमा (स0), कहीं आप अपनी बन्दी लाडलियों को देखतीं नगर–नगर, गाँव–गाँव फिरायी जाती, वे आपकी बेटियाँ।

11– ऐ फ़ातिमा (स0), कहीं उन्हें घुमाई जाती देखतीं, और फिर कहीं ज़ैनुल आबिदीन (अ0) की ओर आँख करतीं।

12– ऐ फ़ातिमा (अ0)! कहीं हमें देखतीं कि कैसे रातें जागते बितायीं यहाँ तक कि अन्धेपन को पहुँच गये।

13– ऐ फातिमा (स0)! आपको अपने दुश्मनों (के हाथों) से वे दुख बल्कि उनका तनिक भर दुख न मिले जो हम पर पड़े।

14– अगर आप इस समय जीती होतीं और सदा ही जीती, तो क़यामत तक हम पर रोती रहतीं।

15– ऐ संवादक! बकीआ (जन्नतुल बक़ीआ) की ओर देख, ठहर और पुकार लगाः ऐ संसारों के पालने वाले (ख़ुदा) के चहीते (नबी स0) के बेटे!

16– और उनसे कह कि ए चचा, पाक पुनीत हसन (अ0), आपके भाई के घर वाले बलि हुए, ख़त्म हो गये।

17– ए चचा, आपके भाई हुसैन (अ0) बलि हो गये और आपसे दूर रेत में गाड़ दिये गये।

18– (पर इस तरह कि उनका शरीर) बेसर (था) और उन पर पशु–पक्षी ज़ोर–ज़ोर से (चीख़–चीख़ कर) मातम कर रहे थे।

19– कहीं आप देखते! दुश्मन आपके घराने की पर्दे वाली महिलाओं को बन्दी बनाकर ले गये जिनकी मदद करने वाला कोई न था।

20– आपकी सन्तान ऊँटों की नंगी पीठ पर बिठाई गई और वे औरतें खुले मुँह (बे पर्दा) फिरायी गयी, कहीं आप उनकी यह हालत देखते।

21– ऐ अपने नाना के नगर (मदीना)! अब तो हमको न स्वीकार कर, हम तो दुख और शोक लेकन पलटे हैं।

22– जब तुझ से हम निकले थे तो घर भरा था और अब पलटे हैं तो न मर्द साथ हैं न बच्चे।

23– जब निकले थे तो पूरे दल के साथ, जब लौटे तो नंगे सर, लुटे हुए।

24– (उस समय) हम खुले आम ख़ुदा की शरण में थे जबकि (आज) डरे सहमे और शरणहीन (बे आसरा) पलटे हैं।

25– (तब) हमारे दिल रखने वाले हमारे संरक्षक हुसैन (अ0) थे, (अब) हुसैन को वन में छोड़ आये हैं।

26– अब तो हम सर्वनाश (तबाह) हुए बे रखवाले के हैं, अपने भाई का नौहा (मातम) कर रहे हैं।

27– हम तो ऊँटों पर (गाँव–गाँव) फिराये गये, उन ऊँटों पर जो हमारे बैर से भरे हुए थे।

28– हम यासीन[1] और ताहा[2] की बेटियाँ हैं, अपने बाप (पितामह) पर रोते हैं।

29– हम बेशक पाक पवित्र नारियाँ हैं, (ख़ुदा की) सच्ची लगन रखने वालियाँ (उसी की) चुनी हुई विशिष्ट हैं।

30– (दुख के) इम्तेहानों पर हम सहनशील हैं और सच्ची नसीहत, अच्छी बाते बताने वालियाँ हैं।

31– अरे, ए हमारे नाना! हुसैन (अ0) मार डाले गये, हमारे बारे में तो ख़ुदा का भी पास न किया गया।

32– अरे, ऐ हमारे नाना! हमारे दुश्मन अपनी चाहतें पा गये, और हमें सता कर क्रूर बेदर्द हो गये।

33– हाँ! उन्होंने औरतों को बेपर्दा (अवमानित) किया और उन्हें ऊँट–गद्दियों पर सवार करके फिराया।

34– ज़ैनब (अ0) को उनके पर्दे से निकाला गया, फातिमा (हज़रत अली अ0 की बेटी–जनाब

ज़ैनब) रोती पीटती फिरती थीं।

35– सुकैना ''सकीना'' विरह की आग से गुहार करती थी बार–बार पुकारती थी, संसारों के पालने वाले (ख़ुदा) से गुहार लगाती (मदद को पुकारती)

36– ज़ैनुल आबेदीन ज़िल्लत/अपमान के बन्दी थे, दुश्मनों ने कई बार उन्हें मार डालने का संकल्प/इरादा किया।

37– फिर उसके बाद तो दुनिया पर मिट्टी (पड़ी) है हमे इसी दुनिया के लिए मरने का प्याला पिलाया गया।

38– यह मेरी बीती (बिपता) है, विस्तार से मेरी हालत (का बयान) है, ए सुनने वालों! हम पर रोओ।

(1), (2) ये दोनों रसूल (स0) के उपनाम (लक़ब) हैं जो क़ुर्आन मजीद में भी आये हैं। ☐☐☐

एक 'सलाम' अनुवाद के साथ

मूल

हैदर(अ0) की सना मुझसे सुनाई नहीं जाती,
वह कौन सिफ़त है कि जो पाई नहीं जाती।
लज़्ज़त यह किसी चीज़ में पाई नहीं जाती,
जुज़ आले नबी(स0) ग़ैर से खाई नहीं जाती।
करता है वह रहम और बशर इज्जो तबख़्तुर,
बन्दों की ख़ुदी, उसकी ख़ुदाई नहीं जाती।
कट जायगी अपनी यूँ ही, ए ख़ाना बदोशी,
दो दिन के लिए छावनी छाई नहीं जाती।
कहती थी लईनों से यह शमशीरे अलमदार,
अब शेर के क़ब्ज़े से तराई नहीं जाती।
क़ासिम है मुसिर बहरे रिज़ा शाह है खामोश,
दौलत ज़ने बेवा की लुटाई नहीं जाती।
मरने से जवाँ बेटे के यह हो गई हालत,
लाश आप उठाते हैं उठाई नहीं जाती।
बेशीर को आग़ोश से रख्खा है लहद में,
पर चाँद सी तसवीर छिपाई नहीं जाती।
तक़रीर की क्या बात है, क्या कहना है 'यूनुस',
पर मदहे ख़ामोशी भी सुनाई नहीं जाती।

'यूनुस' ज़ैदपूरी

अनुवाद

महिमा अली(अ0) की मुझसे सुनाई नहीं जाती,
वह कौन भलाई है जो पाई नहीं जाती।
यह बात किसी चीज़ में पाई नहीं जाती,
मासूम को छोड़, और से खाई नहीं जाती।
वह करता दया, मीन मनुष्य करता है उत्पात,
मानव का अहम् उसकी ख़ुदाई नहीं जाती।
कट जायगी अपनी यूँही बनजारों के जैसी
दो दिन के लिए छावनी छाई नहीं जाती।
धिक्कारितों से कहती थी अब्बास की तलवार,
अब शेर के पन्जे से तराई नहीं जाती।
क़ासिम को चचा कैसे ही दें रन की इजाज़त,
विधवा की कमाई है, लुटाई नहीं जाती।
मरने से तरुण बेटे के यह हो गई स्थिति,
लाश आप उठाते हैं उठाई नहीं जाती।
यूँ गोद से छःमाहे को रख्खा है गढ़े में,
पर चाँद सी छाया है छुपाई नहीं जाती।
कहने की भी क्या बात है क्या कहना है 'यूनुस',
पर मूक प्रशंसा भी सुनाई नहीं जाती।

मु0 र0 आबिद